RNI/MPHIN/2013/61414

ISSN 2278-0327
Peer Reviewed
Refereed Journal

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC Care Listed

ज्योतिर्वेद - प्रस्थानम्

संस्कृत वाङ्मय की शोधपत्रिका - संस्कृत छात्रों की मार्गदर्शिका

दशम वर्ष, प्रथम अंक

मार्च –अप्रैल 2021

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

Bharatiya Jyotisham
पश्यति भावयन् लोकान्
भारतीय ज्योतिषम्

₹ 30

दो गज की दूरी - मास्क है जरूरी

ISSN 2278 - 0327

विषय-सूची

क्र.	लेख विषय	लेखक	पृ.सं.
1.	गांधी जी के आत्मनिर्भरता के आदर्श की वर्तमान प्रासंगिकता	डॉ. सुभाष चन्द्र डबास 'चौधरी' डॉ. संजय कुमार	05
2.	प्रकृति कवि कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तल में परिस्थिति विज्ञान	डॉ. अक्षय कुमार मिश्र	09
3.	शतपथब्राह्मण में 'पुरुष' का स्वरूप- 'पुरुषो वै यज्ञः'	डॉ. रेनू कोछड़ शर्मा	14
4.	संस्कृत साहित्य में मानव के समग्र विकास में सहायक जीवन मूल्य	डॉ. मोना शर्मा	19
5.	श्री गुरु तेगबहादुर साहिब : सांस्कृतिक चेतना के आधार-स्तम्भ	डॉ. विनोद कुमार	22
6.	आयुर्वेदिक मानसिक स्वास्थ्य और त्रिगुण सिद्धान्त	डॉ. विजय कुमार मीना	25
7.	श्रीमद्भगवद्गीता का दार्शनिक चिन्तन	डॉ. सुमन कुमारी	28
8.	भाग्य परिशीलन	डॉ. अनिल कुमार	32
9.	भूमि परीक्षण की सरल विधियाँ	डॉ. भूपेन्द्र कुमार पाण्डेय	38
10.	वास्तुशास्त्र की मूल-संकल्पना एवं लोकोपकारक सिद्धान्त	डॉ. रविन्द्र प्रसाद उनियाल	41
11.	कला के क्षेत्र में ज्योतिषशास्त्र का योगदान	डॉ. नीरज कुमार जोशी डॉ. प्रभाकर पुरोहित	46
12.	हिन्दी कविता में नई सम्भावनाओं का द्वार खोलती कृति 'जुर्रत ख्वाब देखने की'	डॉ. संजय कुमार डॉ. सुभाष चन्द्र डबास 'चौधरी'	53
13.	पातंजल योगसूत्र का साधना मार्ग	डॉ. माधवी चंद्रा	57
14.	मुग्धबोध और अष्टाध्यायी के कृत् प्रत्ययों का अर्थ वैशिष्ट्य	ज्योति	60
15.	संस्कृत साहित्य में गुरु-शिष्य सम्बन्धोल्लेख	डॉ. विशाल भारद्वाज	64
16.	कौटिल्य की प्राचीन ग्रामीण शासन व्यवस्था एवं उसकी प्रासंगिकता	डॉ. हरेती लाल मीना	68
17.	संस्कृत के प्रमुख नाटकों में न्याय व्यवस्था	डॉ. जी. एल. पाटीदार डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार सेवक	72
18.	आधुनिक परिप्रेक्ष्य में वास्तुशास्त्र की दृष्टि से वाटिकानिर्माण में वृक्षविचार	डॉ.मुकेश शर्मा	77
19.	संस्कृत साहित्यों में स्त्री-चिन्तन एवं उनकी भूमिका	डॉ. आशीष शुक्ला	81
20.	ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से मानसिक रोगों के नियन्त्रण पर मनोवैज्ञानिकों का चिन्तन	डॉ. कौशल किशोर बिजल्वाण	83
21.	श्री रामेश्वर दयालु विरचित शान्तामंगल नाटक में गुण विवेचन	डॉ. मनोज कुमार	85
22.	भारतीय भाषाओं के विकास में संस्कृत भाषा का योगदान	डॉ. लेखराम दन्नाना	88
23.	काश्मीर शैवागमों के 'शिवसूत्रम्' में शिवस्वरूप की अवधारणा	डॉ. प्रदीप	91
24.	मालवांचल की बोली एवं उपबोलियों की विशेषताओं का समेकित विश्लेषण	डॉ. सुरेश कुमार बैरागी	96
25.	पं. बालकृष्ण भट्ट का साहित्य और हिन्दी नवजागरण	डॉ. अमित कुमार पाण्डेय डॉ. संजय कुमार	100

ISSN 2278 - 0327

कौटिल्य की प्राचीन ग्रामीण शासन व्यवस्था एवं उसकी प्रासंगिकता

डॉ. हरेती लाल मीना
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
करोड़ीमल महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सारांश-

वर्तमान समय में भारत के ग्रामीण समाज की जो दुर्दशा दिखाई देती है, उसे देखकर हमारा ध्यान प्राचीन प्रचलित ग्रामीण शासन व्यवस्था पर जाता है, जिसके अन्तर्गत गांवों को पूर्ण स्वायत्ता प्राप्त थी और वे ग्रामीण समाज का पूर्ण प्रबन्ध ग्रामीण संसाधनों के माध्यम से ही करते थे। आज के इस समय में गांवों में जो विकृतियाँ फैलती जा रही हैं, उन्हें देखकर यह अनुभव होता है कि हमारी ग्रामीण शासन व्यवस्था कितनी पंगु हो चुकी है।

कूट शब्द- ग्राम, ग्रामिक, पुस्तकस्थ और स्वशासन ।

प्रस्तावना-

कौटिल्य के अनुसार जनपद का निर्माण ऐसे ग्रामों से मिलकर होता था, जिनमें 100 से 500 तक कुल परिवार निवास करते हों। ग्राम का क्षेत्राफल एक कोस से दो कोस तक होता था।[1] प्रत्येक गांव शासन की दृष्टि से अपनी पृथक व स्वतंत्रा सत्ता रखता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से हमें इन ग्राम संस्थाओं की शासन व्यवस्था का पता चलता है। उस समय प्रत्येक ग्राम का शासक पृथक्-पृथक् होता था, जिसे ग्रामिक कहते थे। ग्रामिक ग्राम के अन्य निवासियों के साथ मिलकर गांव के शासन का प्रबन्ध करता था तथा दोषपूर्ण अपराधियों को दण्ड देता था और किसी व्यक्ति को गांव से बहिष्कृत भी कर सकता था।[2] ग्राम सभाएँ विभिन्न समितियाँ बनाकर शासन करती थी। ये समितियाँ थी- 1. शासन कार्य का नियन्त्राण तथा निरीक्षण समिति, 2. दानसमिति, 3. जल-समिति, 4. उद्यान-समिति, 5. न्याय-समिति, 6. कोष-समिति विविध् विभागों की निरीक्षण समिति, 8. क्षेत्र-समिति, 9. मन्दिर-समिति, 10. आतिथ्य-समिति।[3] अपने कार्यों को सम्पादित करने के लिए ग्रामों के पास अपना सार्वजनिक कोष भी होता था, जो जुर्माने ग्रामिक द्वारा अपराधियों से वसूले जाते थे वे इसी निधि में जमा होते थे।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ग्राम्य व्यवस्था-

कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र में ग्रामिक और ग्राम (ग्राम संख्या) के कार्य को स्पष्ट बताया गया है- 'जो कृषक गांव में खेती करने के लिए आए पर खेती न करे, उस पर जुर्माना किया जाए और यह जुर्माना 'ग्राम' प्राप्त करें। जिसने काम करने के लिए पेशगी वेतन (पारिश्रमिक) ले लिया हो, पर काम न किया हो उससे पेशगी ली हुई राशि का दुगना जुर्माने के रूप में वसूला जाए। यदि ऐसा व्यक्ति किसी 'प्रवहण' में सम्मिलित हुआ हो और वहाँ उसने भोजन, पेय आदि प्राप्त किया हो, पर उसके बदले में वांछित कार्यों का सम्पादन न किया हो, तो भोजन एवं पेय के मूल्य का उससे दुगना वसूल किया जाए।'[4] ग्राम की ओर से ही सार्वजनिक हित के अनेक कार्यों की व्यवस्था की जाती थी। इस ग्राम संस्था के माध्यम से ग्रामीण लोगों के मनोरंजन के लिए विविध तमाशों की व्यवस्था की जाती थी, जिनमें सब ग्रामवासियों को हिस्सा बाँटना होता था।[5] जो लोग अपने सार्वजनिक कर्त्तव्य की उपेक्षा करते थे, उन पर जुर्माना किया जाता था।[6] देश (जनपद) में विविध्मार्गों को बनाने, बाँध बाँधने आदि के कार्य भी ग्रामों द्वारा किये जाते थे।[7] इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्राम का अपना एक पृथक् संगठन भी उस युग में विद्यमान था। यह ग्राम संस्था न्याय का कार्य भी करती थी। ग्राम सभाओं में बनाये गये नियम साम्राज्य के उच्च न्यायालयों में भी मान्य होते थे। अक्ष पटल के अध्यक्ष के कार्यों में एक यह भी था कि वह ग्राम संघ के धर्म, व्यवहार, चरित्र, संस्थान आदि को निबन्ध पुस्तकस्थ (रजिस्टर्ड) करें।[8]

कौटिल्य अर्थशास्त्र के अध्ययन से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता है कि प्राचीनकाल के ग्रामों में स्वायत्त संस्थाओं की सत्ता थी। इस ग्राम संघ के सदस्यों को ग्रामवृद्ध कहा जाता था।[9] सम्भवत: ग्राम में निवास करने वाले सब कुलों या परिवारों के मुखियाओं (वृद्धों) द्वारा ही ग्राम संघ का निर्माण होता था। ये